वेदोऽखिलो धर्ममूलम्

वेद प्रकाश

मासिक पत्र (6-7 प्रतिमाह) मूल्यः 5 रुपये (30/-वार्षिक) नवम्बर 2018
कुल पृष्ठ संख्या 20, वजनः 40 ग्राम, प्रकाशन तिथिः 4 नवम्बर 2018

अन्तःपथ

मुक्ति से पुनरावृत्ति *–महात्मा चैतन्यस्वामी*	3 से 10
आर्यसमाज के इतिहास पुरुषः श्री लाला गोविन्दराम जी–2 *–प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'*	10 से 14
पौराणिक हिन्दुओं की 8 शंकाओं का समाधान *–आर्य जिज्ञासु*	14 से 16
आर्यसमाज की महान विभूति–डॉ. भवानी लाल भारतीय *–डॉ० विवेक आर्य*	16 से 18

नवरात्रि में आप सभी प्रार्थना उपासना करते हुए मांसाहार को नौ दिन नहीं खाते हो।

अब उस शक्ति का आशीर्वाद हमेशा प्राप्त करने के लिए मांसाहार का प्रतिदिन त्याग कर आशीर्वाद प्राप्त करें।

बोध कथा

बला घर आ गई

–प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु' वेद सदन, अबोहर–१५२११६

श्री पण्डित इन्द्र जी ने अपने बाल्यकाल का एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण संस्मरण लिखा है। दिलजले बलिदानी लेखराम को समझने के लिए यह संस्मरण पढ़ना हमारी दृष्टि में परमावश्यक है।

"पण्डित लेखराम जी का पिता से सगे भाई जैसा प्रेम था। हमारे घर पर उनका आना–जाना और रहना नि:संकोच था। हम बच्चे उन्हें 'पण्डित जी' नाम से पुकारा करते थे। घर में प्राय: उनकी चर्चा हुआ करती थी। पिताजी उनके निडरपन के कारनामे बड़ी प्रशंसा के साथ सुनाया करते थे। ताई जी उनसे काफी असंतुष्ट रहती थीं। वह गृहस्वामिनी ठहरीं, हमेशा का मेहमान कैसे रुच सकता था? एक और भी बात थी। वह स्त्रीसुलभ नैसर्गिक बुद्धि से यह अनुभव किया करती थीं कि इस अनथक उपदेशक के साथ जरूर कोई–न–कोई मुसीबत बंधी हुई है, जो हमारे घर पर भी आ सकती है। जब बाहर से खबर आती थी कि पण्डित लेखराम जी आ रहे हैं तब ताई जी प्राय: कहा करती थीं—आ गई आफत।"

ताई जी की इस मनोभावना का कारण यह था कि उस युग में आर्यसमाज को सब ओर से विरोध का सामना करना पड़ता था। आर्यसमाज पर किये गये प्रत्येक प्रहार का उत्तर देने के लिए पण्डित लेखराम व मुंशीराम सबसे आगे होते थे। श्री सत्यव्रत जी सिद्धान्तालंकार, पूर्व उपकुलपति गुरुकुल कांगड़ी के शब्दों में **स्वामी श्रद्धानन्दजी महाराज तो समय की प्रत्येक चुनौती का उत्तर थे।** पण्डित लेखराम जी का ाम जी के घर पर आगमन इसी कारण अच्छा नहीं समझा जाता था। परिवार वाले समझते थे कि इनकी प्रेरणा व संगति से ही मुंशीराम नित्य नूतन विपदा से आलिंगन करने को सदा उद्यत रहता है। **मुंशीराम व लेखराम के स्वभाव में यह समानता उनकी मैत्री को पक्का करने वाली थी। एक कल्याण मार्ग का पथिक था तो दूसरा बलिदान मार्ग का पथिक।** किसी भी समाज, संगठन व राष्ट्र का कल्याण बलिदान के भाव से ही सम्भव है। **इस प्रकार कल्याण व बलिदान दोनों पर्यायवाची हैं। एक ही भाव के दो शब्द हैं।** मुंशीराम व लेखराम की मैत्री एक दशाब्दी से भी कम रही। इतने स्वल्पकाल में दोनों ही एक–दूसरे से ऐसे घुलमिल गये कि एक के जीवन की चर्चा दूसरे के बिना अधूरी ही रहती है। **श्रद्धानन्द में लेखराम ओतप्रोत हैं और लेखराम के व्यक्तित्व में मुंशीराम को हम रमा हुआ पाते हैं।**

एक कविता के कुछ पद्य हमारे इस भाव और उपर्युक्त घटना को समझने में सहायक हो सकते हैं। स्वामी श्रद्धानन्द जी के प्रति इस में लिखा है—

रहा तड़पता सदा तरसता बलि होने को। रक्त बहाया उसने जग का मल धोने को॥
लेखराम सी रही हिये में आग धधकती। उसकी गर्जन सुनकर के फिर जागी जगती॥
उसके तेजोमय जीवन की छवि निराली। नित्य नई उस देश धर्म हित विपदा पाली॥

'जिज्ञासु'

वेदप्रकाश

संस्थापक : स्वर्गीय श्री गोविन्दराम हासानन्द

वर्ष ६८ अंक ४ वार्षिक मूल्य : तीस रुपये, एक प्रति ५ रुपये, नवम्बर, २०१८

सम्पा० **अजयकुमार** पूर्व सम्पादक : स्व० **स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती**

मुक्ति से पुनरावृत्ति

–महात्मा चैतन्यस्वामी,

महादेव, सुन्दरनगर–174401, हि०प्र०

मुक्ति क्या है? इस सम्बन्ध में महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थप्रकाश (नवाँ समुल्लास) में प्रश्न उठाया–'मुक्ति किसको कहते हैं? **उत्तर**–**'मुचन्ति पृथग्भवन्ति जना यस्यां सा मुक्तिः'**, जिसमें छूट जाना हो, उसका नाम 'मुक्ति' है। **प्रश्न**–किससे छूट जाना? **उत्तर**–जिससे छूटने की इच्छा सब जीव करते हैं। **प्रश्न**–किससे छूटने की इच्छा करते हैं? **उत्तर**–जिससे छूटना चाहते हैं। **प्रश्न**–किससे छूटना चाहते हैं? **उत्तर**-दुःख से। **प्रश्न**-छूटकर किसको प्राप्त होते हैं, और कहाँ रहते हैं? **उत्तर**-सुख को प्राप्त होते, और ब्रह्म में रहते हैं। आगे उन्होंने प्रश्न उठाया–'मुक्ति और बन्ध किन-किन बातों से होता है? उत्तर-परमेश्वर की आज्ञा पालने, अधर्म-अविद्या-कुसंग-कुसंस्कार बुरे व्यसनों से अलग रहने, और सत्यभाषण परोपकार विद्या पक्षपातरहित न्याय-धर्म की वृद्धि करने, पूर्वोक्त प्रकार से परमेश्वर की स्तुति-प्रार्थना और उपासना अर्थात् योगाभ्यास करने, विद्या पढ़ने-पढ़ाने, और धर्म से पुरुषार्थ कर ज्ञान की उन्नति करने, सब से उत्तम साधनों को करने, और जो कुछ करे वह सब पक्षपातरहित न्यायधर्मानुसार ही करे, इत्यादि साधनों से मुक्ति, और इनसे विपरीत ईश्वराज्ञा-भंग करने आदि काम से बन्ध होता है।' ब्रह्म को प्राप्त करके जीवात्मा उसी में विलीन हो जाता है या उसका अलग से कोई अस्तित्व बना रहता है, इस सम्बन्ध में भी हम पहले महर्षि जी का ही कथन प्रस्तुत करना चाहते हैं। वे सत्यार्थप्रकाश (नौवाँ समुल्लास) में प्रश्न उठाते हैं–'मुक्ति में जीव का लय होता है, वा विद्यमान रहता है? **उत्तर**-विद्यमान रहता है। **प्रश्न**-कहाँ रहता है? **उत्तर**–ब्रह्म में। **प्रश्न**–ब्रह्म कहाँ है? और वह मुक्त जीव

एक ठिकाने रहता है, वा स्वेच्छाचारी होकर सर्वत्र विचरता है? **उत्तर**–जो ब्रह्म सर्वत्र पूर्ण है, उसी में मुक्त जीव अव्याहतगति अर्थात् उसको कहीं रुकावट नहीं। विज्ञान आनन्दपूर्वक स्वतन्त्र विचरता है।'

सत्यार्थप्रकाश (सातवाँ समुल्लास) में वे प्रश्न उठाते हैं–'ब्रह्म के सत् चित् आनन्द, और जीव के अस्ति भाति प्रियरूप से एकता होती है। फिर क्यों खण्डन करते हो? उत्तर-किंचित साधर्म्य मिलने से एकता नहीं हो सकती। जैसे पृथिवी जड़ दृश्य है, वैसे जल और अग्नि आदि भी जड़ और दृश्य हैं, इतने से एकता नहीं होती। इनमें वैधर्म्य-भेदकारक अर्थात् विरुद्ध धर्म, जैसे गन्ध, रूक्षता, काठिन्य आदि गुण पृथिवी, और रस द्रवत्व, कोमलत्वादि धर्म जल, और रूप दाहकत्वादि धर्म अग्नि के होने से एकता नहीं। जैसे मनुष्य और कीड़ी आँख से देखते मुख से खाते (और) पग से चलते हैं, तथापि मनुष्य की आकृति दो पग और कीड़ी की आकृति अनेक पग आदि भिन्न होने से एकता नही होती। वैसे परमेश्वर के अनन्तज्ञान आनन्द बल क्रिया निर्भ्रान्तित्व और व्यापकता जीव से, और जीव के अल्पज्ञान, अल्पबल, अल्पस्वरूप सब भ्रान्तित्व और परिच्छिन्नतादि गुण ब्रह्म से भिन्न होने से जीव और परमेश्वर एक नहीं। क्योंकि इनका स्वरूप (परमेश्वर अतिसूक्ष्म और जीव उससे कुछ स्थूल होने से) भिन्न है।

छान्दोग्य उपनिषद (8-3-4) के अनुसार–**'परं ज्योतिरूपसम्पद्य स्वेन रूपणाभिनिष्पद्यते।'** अर्थात् जीवात्मा उस परम ज्योति को प्राप्त होकर अपने रूप में बना रहता है। तैत्तिरीयोपनिषद् में (ब्र०व०1-1) भी कहा गया है–**सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म यो वेद निहितं गुहायां परमे व्योमन्। सोऽश्नुते सर्वान् कामान् सह ब्रह्मणा विपश्चितेति।** अर्थात् जो हृदयाकाश में स्थित अविनाशी, चेतनस्वरूप तथा सर्वव्यापक ब्रह्म को जान लेता है वह सर्वज्ञ ब्रह्म का साथी हो जाता है और साथी रहते हुए सब प्रकार से तृप्त रहता है। सांख्यकार का कहना है–**भोक्तृभावात्** (1-143) सुख-दुःख का भोक्ता होने से भी जीव ब्रह्म से भिन्न है।

कुछ लोग जीव का ब्रह्म में लीन होने के लिए मुण्डकोपनिषद् (3-2-8) का यह कथन प्रस्तुत करते हैं कि–**यथा नद्यः स्यन्दमानाः समुद्रेऽस्तं गच्छन्ति नामरूपे विहाय। तथा विद्वान् नामरूपाद्विमुक्तः परात्परं पुरुषमुपैति दिव्यम्।** अर्थात् जिस प्रकार नदियाँ बहती-बहती अपने नामरूप को छोड़कर समुद्र में जा मिलती हैं। वैसे ही विद्वान् पुरुष नाम और रूप से

छूटकर परात्परब्रह्म को प्राप्त हो जाता है। इसका समाधान करते हुए स्वामी विद्यानन्द सरस्वती जी लिखते हैं–'यहाँ नदियों के समुद्र में मिलने से समझा जाता है कि परमात्मा को प्राप्त होने पर जीवात्मा का अपना अस्तित्व समाप्त हो जाता है। यथार्थ में ऐसा नहीं है। प्रत्येक वस्तु के दो रूप होते हैं–एक उस वस्तु का बाह्य रूप, उसका आकार-प्रकार और रंग रूपादि और दूसरा उसकी आन्तरिक सत्ता जिसे वस्तुतत्व कहते हैं। नामरूप शरीर के होते हैं, जीव के नहीं। शरीर के नामरूप ही जीव का बाह्य रूप हैं। उन्हीं को छोड़ने की बात यहाँ कही गई है। उपनिषद् का भाव यह है कि जिस प्रकार नदियाँ समुद्र में मिलने के पश्चात् अपना गंगा-यमुना का नाम और रूप खो बैठती हैं उसी प्रकार मुक्त जीव अपने बाह्य रूप-शरीर और यज्ञदत्त, देवदत्त आदि नामों को छोड़कर ईश्वर को प्राप्त होता है।

यद्यपि नदियों का नामरूप नहीं रहता तथापि समुद्र में मिलने पर भी उनका वस्तुतत्व-जल नष्ट नहीं हो जाता। वह समुद्र में मिलकर उसके जल की मात्रा को बढ़ा देता है। जल नष्ट हो गया होता तो ऐसा न होता। इसी प्रकार अपने नामरूप को खोकर भी मुक्त जीव का वस्तुतत्व (आत्मा) नष्ट नहीं होता। वह परमेश्वर के साथी के रूप में सदा विद्यमान रहता है।" **ब्रह्म वेदब्रह्मैव भवति।** (मुण्डक० 3-2-9) इसका तात्पर्य भी जीव का ब्रह्म होना नहीं है बल्कि यही है कि मानो वह ब्रह्म ही हो जाता है क्योंकि इसी उपनिषद् में अन्यत्र कहा है–

यदा पश्यः पश्यते रूक्मवर्ण कर्तारमीशं पुरुषं ब्रह्मयोनिम्।
तदा विद्वान्पुण्यपापे विधूय निरंजनः परमं साम्यमुपैति।।

(मुण्डक० 3-1-3)

अर्थात् जब जीवात्मा द्रष्टा बनकर, बृहत् विश्व के कारण इसके स्वामी व कर्त्ता, प्रकाश-स्वरूप पुरुष को देख लेता है, तब वह विद्वान् पुण्य-पाप को छोड़कर, शोक, मोह, राग और द्वैष से अलग होकर, परम समता को प्राप्त कर लेता है...इसी प्रकार **अयमात्मा ब्रह्म** (माण्डुक्य 2), **प्रज्ञानं ब्रह्म।** (एतरेय 3-3), **तत्वमसि।** (छान्दो 06-11-3), **अहं ब्रह्मास्मि।** (बृहदा० उप० 1-4-10), इनमें भी कहीं पर ब्रह्म और जीव के एक होने की बात नहीं कही गई है बल्कि माण्डुक्योपनिषद् का कथन है कि 'यह सम्पूर्ण विश्व-ब्रह्माण्ड-ब्रह्म है अर्थात् ब्रह्म का विस्तार है। इसी प्रकार हम सबका यह पिण्ड भी ब्रह्म है अर्थात् जैसे ब्रह्माण्ड में ब्रह्म का विस्तार विश्व है, वैसे ब्रह्म

की भाँति पिण्ड में जीव का विस्तार शरीर है।' एतरेय के उपरोक्त कथन में जीवात्मा की नहीं बल्कि ब्रह्म की बात कही गई है। छान्दोग्योपनिषद् के वचन में श्वेतकेतु को आत्मा का महत्व बताया गया है कि तू अर्थात् तेरा आत्मा तत्व है"सत् है। बृहदा० उपनिषद् में जो **अहं ब्रह्मास्मि** आया है उसका भाव महान् होने से है न कि आत्मा और परमात्मा का एक होना"

ब्रह्ममय होने का यह अर्थ नहीं लगाया जा सकता कि जीव ब्रह्म के सदृश हो जाता है। इस सम्बन्ध में भी सत्यार्थप्रकाश (नौवाँ समुल्लास) में चर्चा करते हुए महर्षि लिखते हैं–**प्रश्न**–जैसे परमेश्वर नित्यमुक्त पूर्ण सुखी है, वैसे ही जीव भी नित्यमुक्त और सुखी रहेगा, तो कोई भी दोष नहीं आवेगा। **उत्तर**–परमेश्वर अनन्तस्वरूप सामर्थ्य गुण-कर्म-स्वभाववाला है, इसलिए वह कभी अविद्या और दु:ख-बन्धन में नहीं गिर सकता। जीव मुक्त होकर भी शुद्धस्वरूप अल्पज्ञ और परिमित गुण कर्म स्वभाववाला (ही) रहता है, वह परमेश्वर के सदृश कभी नहीं होता। जीवात्मा ब्रह्म के समान हो जाता है, इसे हम इस प्रकार से समझ सकते हैं कि जैसे एक लोहे का गोला तपकर बिल्कुल आग जैसा ही हो जाता है मगर फिर भी उसका अलग अस्तित्व तो बना ही रहता है। यदि उसे आग से बाहर निकाल दें तो वह पुन: लोहे का गोला ही हो जाता है क्योंकि वास्तव में वह लोहे का ही गोला था, अग्नि में तपकर वह आग जैसा हो गया था"यदि जीवात्मा का लय हो जाना माने तो जीवात्मा का अपना अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा जो कि असंभव है क्योंकि आत्मा स्वयं में नित्य, अविनाशी तथा एक अनादि पदार्थ है। ब्रह्म तो स्वभाव से आनन्दस्वरूप है, जबकि जीवात्मा निमित्त से आनन्दमय होता है। जो निमित्त से आनन्दमय है वह नित्य आनन्दस्वरूप की समता कैसे कर सकेगा? और कुछ नहीं तो कालभेद तो रहेगा ही। **'ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवित।'** अथवा **'यो वै तत्परं ब्रह्म वेद स ब्रह्मैव भवति।'** को लेकर यदि कोई हठ करे कि ब्रह्म को जानने वाला सचमुच ब्रह्म हो जाता है तो भी यहाँ 'भवति'–हो जाता है क्रिया से स्पष्ट है कि ब्रह्मवित् पहले ब्रह्म नहीं था, अब हुआ। उत्पन्न होने वाला भाव अनित्य एवं पराधीन होता है। निमित्त से बनने वाला सादि, सादि होने से अनिवार्यत: सान्त और सादि सान्त होने से अनित्य होगा। परन्तु असली ब्रह्म तो अनादि, नित्य तथा स्वभाव से आनन्दस्वरूप है। यह अन्तर बना रहेगा और इस अन्तर के कारण दोनों में एकात्म्य कभी नहीं होगा। ऋग्वेद में आया है–**कस्य नूनं कतमस्यामृतानाम मनामहे चारूं देवस्य नाम। को नो**

मह्या अदितये पुनर्दात्पितरं च दृशेयं मातरं च। अग्नेर्वयं प्रथमस्यामृतानां मनामहे चारू देवस्य नाम। स नो मह्या अदितये पुनर्दात्पितरं च दृशेयं मातरं च॥ (ऋ० 1-24-1, 2)

भावार्थ–प्रथम मन्त्र में प्रश्न का विषय है कौन ऐसा पदार्थ है जो सनातन अर्थात् अविनाशी पदार्थों से भी सनातन अविनाशी है कि जिसका अत्यन्त उत्कर्ष युक्त नाम का स्मरण करें वा जानें और कौन देव हम लोगों के लिए किस-किस हेतु से एक जन्म से दूसरे जन्म का सम्पादन करता और अमृत वा आनन्द के कराने वाली मुक्ति को प्राप्त कराकर भी फिर हम लोगों को माता-पिता से दूसरे जन्म में शरीर को धारण करता है। दूसरे मन्त्र में उत्तर दिया गया कि हे मनुष्यो! हम लोग जिस अनादि स्वरूप, सदा अमर रहने वा जो हम सब लोगों के किए हुए पाप और पुण्यों के अनुसार यथायोग्य सुख-दुःख फल देने वाले जगदीश्वर देव को निश्चय करते और जिसकी न्याययुक्त व्यवस्था से पुनः जन्म को प्राप्त होते हैं। तुम लोग भी उसी को जानो किन्तु इससे अन्य दूसरा कोई उक्त कर्म करने वाला नहीं है। ऐसा निश्चय हम लोगों को है कि वही मोक्ष पदवी को पहुँचे हुए जीवों का भी महाकल्प के अन्त में फिर पाप-पुण्य की तुल्यता से पिता-माता और स्त्री आदि के बीच में मनुष्यजन्म धारण कराता है। देवयान से उत्क्रमण करती हुई मुक्ति को प्राप्त मुक्तात्मा मुक्ति की पूर्ण अवधि के बाद ही पुनः जन्म धारण करती है इस सम्बन्ध में ऋग्वेद और भी अधिक स्पष्ट शब्दों में कहता है–**परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात्। चक्षुष्मते श्रृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजां रीरिषे मोत वीरान्** (ऋ०10-18-1) भावार्थ–विनाश करने वाला काल पुनः पुनः जन्म धारण करने वाले साधारण जनों को बार-बार मारता है परन्तु देवयान् मोक्षमार्ग पर जाने वाले मुमुक्षु-जनों को बार-बार या मध्य में नहीं मारता, अपितु उन्हें पूर्ण अवस्था प्रदान करता है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी सत्यार्थप्रकाश (नवाँ समुल्लास) में प्रश्न उठाते हैं–'जीव मुक्ति को प्राप्त होकर पुनः जन्म-मरण रूप दुःख में कभी आते हैं, वा नहीं? क्योंकि–**'न च पुनरावर्त्तते न च पुनरावर्त्तत इति॥'** (छान्दो० उप० 8-15-1), **'अनावृत्तिः शब्दादनावृत्तिः शब्दात्॥'** (वेदान्त दर्शन 4-4-22), **'यद् गत्वा न निवर्त्तन्ते तद्धाम परमं मम॥'** (गीता 15-6) इत्यादि वचनों से विदित होता है कि मुक्ति वही है कि जिससे निवृत्त होकर पुनः संसार में कभी नहीं आता।' इसके उत्तर में महर्षि जी ने ऋग्वेद

(1-24-1, 2) तथा सांख्य सूत्र को उद्धृत करके सिद्ध किया है कि बन्ध और मुक्ति सदा नहीं रहती। फिर प्रश्न उठाया (न्याय दर्शन 1-1-22) कि 'जो दुःख का अत्यन्त विच्छेद होता है, वही मुक्ति कहाती है जो कि सदा बना रहता है।' इसका उत्तर देते हुए महर्षि कहते हैं–'यह आवश्यक नहीं कि 'अत्यन्त' शब्द अत्यन्तभाव ही का नाम होवे। जैसे **'अत्यन्तं दुःखमत्यन्तं सुखं वास्य वर्त्तते'** बहुत दुःख और बहुत सुख इस मनुष्य को है। इससे यही विदित होता है कि इसको बहुत सुख वा दुःख है। इसी प्रकार यहाँ भी 'अत्यन्त' शब्द का अर्थ जानना चाहिए।' यहाँ पर लग सकता है कि महर्षि जी ने उपरोक्त उपनिषद्, दर्शन और गीता के वाक्यों का कोई सार्थक उत्तर नहीं दिया है मगर इस सम्बन्ध में पण्डित युधिष्ठिर मीमांसक जी अपने द्वारा सम्पादित सत्यार्थप्रकाश की टिप्पणी में लिखते हैं–'ग्रन्थकार ने यहाँ पूर्वोक्त तीनों प्रमाणों की विशिष्ट व्याख्या न करके वेदादि से विरोध दर्शाकर अपुनरावृति का अप्रामाण्य दर्शाया है। परन्तु ये सभी वचन अत्यन्त प्रामाणिक ग्रन्थों के हैं। इन्हें एक दम अप्रमाणिक कहना नहीं बन सकता। अतः उक्त वचनों का क्या-क्या अभिप्राय है, उसे हम स्पष्ट करते हैं–मीमांसा का एक न्याय है–**'नहि निन्दा निन्दितुं प्रवर्ततेऽपि तु विधेयं स्तोतुम्'** (द्र०2-4-20 शाबरभाष्य)। तद्नुसार **'अपश्वो वाऽन्ये गोअश्वेभ्यः'** इत्यादि वाक्य का गो अश्व से भिन्न पशुओं के पशुत्वाभाव के प्रख्यापन में तात्पर्य नहीं है, अपितु अन्य पशुओं की अपेक्षा गो अश्व की प्रशंसा करना मात्र इष्ट है। इसी प्रकार **'न च पुनरावर्त्तते, न च पुनरावर्तते'** का तात्पर्य मुक्ति से पुनरावृत्ति के निषेध में नहीं है, अपितु मुक्ति के पूर्ण काल पर्यन्त जीव मुक्ति में रहता है, अर्थात् बीच में मुक्ति से नहीं लौटता। यही तात्पर्य उपनिषद् वेदान्तसूत्र तथा गीता के वचन का भी जानना चाहिए।

इसी मीमांसा के **'सर्वत्वमाधिकारिकम्'** (1-2-16) सूत्र के अनुसार दूसरे रूप में भी समझा जा सकता है। ब्राह्मण वचन है–**'पूर्णाहुत्या सर्वान लोकान् अवाप्नोति, सर्वान् लोकान् जयति।'** इस पर विचार करके **'सर्वत्वमाधिकारिकम्'** सूत्र से समाधान किया है कि पूर्णाहुति से प्राप्य जितना फल है, उतने का ही सर्वत्व यहाँ विवक्षित है। उपर्युक्त वचनों का मीमांसा के इस अधिकरण के अनुसार अर्थ इस प्रकार जानना चाहिए–'उक्त वचनों में जो पुनरावर्तन का निषेध किया है, वह आत्यन्तिक निषेध नहीं है, किन्तु प्रकृत मुक्ति विषय से सम्बद्ध है, अर्थात् मुक्ति का जितना काल शास्त्रों

में कहा है, उस काल के मध्य मुक्त विषय से सम्बद्ध है, अर्थात् मुक्ति का जितना काल शास्त्रों में कहा है, उस काल के मध्य मुक्त जीव का संसार में पुनरावर्तन नहीं होता।' स्वामी दर्शनानन्द जी ने इस मत की पुष्टि में छान्दो० उप० (8-15-1) का भाव इस प्रकार व्यक्त किया है कि ब्रह्मलोक अर्थात् मुक्ति की जो अवधि है **(यावत् आयुष)** उस सयम तक जीव नहीं लौटता। वे ब्रह्मलोक अर्थात् मुक्ति की अवधि मानते हैं और **'न च पुनरावर्त्तते'** इस पद की संगति **'यावदायुषं'** से मिलाते हैं। उनके विपक्षी कहते हैं कि **'यावदायुषं'** का अर्थ है 'सदा'। स्वामी जी कहते हैं कि 'आयुषं' (जीवन) शब्द से अवधि का ही बोध होना चाहिए, 'सदा के लिए' 'आयु' शब्द का प्रयोग नहीं किया जाता। आचार्य शंकर जी भी इसी बात की पुष्टि करते हैं–**'यावद् ब्रह्मलोकस्थितिः तावत्तत्रैव तिष्ठति, प्राक्ततो नावर्त्तत इत्यर्थः।'** (छान्दो० उप० 8-15-1) अर्थात् जब तक ब्रह्मलोक में स्थिति है तब तक जीव वहीं रहता है, अवधि की समाप्ति से पूर्व नहीं लौटता। 'यदि **हि नावर्त्तन्त एवमिह ग्रहणमनर्थकमेव स्यात्। तस्मादस्मात्कपादूर्ध्वमावृत्ति र्गम्यते।** (बृह० उप० 6-2-15) अर्थात् यदि मुक्तात्मा का कभी न लौटना अभिप्रैत हो तो 'इह' पद का प्रयोग व्यर्थ हो जाए इसलिए इस कल्प के अनन्तर पुनरावृत्ति जानी जाती है। महर्षि व्यास जी के अनुसार–**'यावदधि कारमवस्थितिराधिकारिकाणाम्।'** (वेदान्त 3-3-32) जब तक मोक्ष के अधिकारी जीवात्माओं का मुक्ति में रहने का अधिकार (समय) होता है, तब तक वे मोक्ष में रहते हैं। कपिल जी कहते हैं–**'इदानीमिव सर्वत्र नात्यन्तोच्छेदः।'** अर्थात् जैसे इस समय सृष्टि चल रही है, वैसे ही सदा सृष्टि चलती रहती है, कभी भी सृष्टि सदा के लिए समाप्त नहीं होती है। कपिल जी के कहने का भाव है कि यदि जीव मुक्ति से लौटता ही नहीं, तो जब सारे जीव एक-एक करके मुक्त हो जाएँगे, तब सृष्टि बनेगी ही नहीं। जो कि कपिल जी नहीं मानते। इसका अर्थ यह हुआ कि जीव मुक्ति से लौटते हैं, तभी तो सदा सृष्टि चलती है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती जी इस सम्बन्ध में सत्यार्थप्रकाश (नौवाँ समुल्लास) में लिखते हैं–'यह बात कभी नहीं हो सकती क्योंकि प्रथम तो जीव का सामर्थ्य शरीरादि पदार्थ और साधन परिमित हैं, पुनः उसका फल अनन्त कैसे हो सकता है? अनन्त आनन्द को भोगने का असीम सामर्थ्यकर्म और साधन जीवों में नहीं। इसलिए अनन्त सुख नहीं भोग सकते। जिनके साधन

नित्य हैं, उनका फल अनित्य कभी नहीं हो सकता। और जो मुक्ति में से कोई भी लौटकर जीव इस संसार में न आवे, तो संसार का उच्छेद अर्थात् जीव निःशेष हो जाने चाहिएं। **प्रश्न**–जितने जीव मुक्त होते हैं, उतने ईश्वर नए उत्पन्न करके संसार में रख देता है। इसलिए निःशेष नहीं होते। **उत्तर**–जो ऐसा होवे, तो जीव अनित्य हो जाए। क्योंकि जिसकी उत्पत्ति होती है, उसका नाश अवश्य होता है। फिर तुम्हारे मतानुसार मुक्ति पाकर भी विनष्ट हो जाए, (तो) मुक्ति अनित्य हो गई और मुक्ति के स्थान में बहुत-सा भीड़-भड़क्का हो जाएगा। क्योंकि वहाँ आगम अधिक और व्यय कुछ भी नहीं होने से बढ़ती का पारावार न होगा।

और दुःख के अनुभव के बिना सुख कुछ भी नहीं हो सकता। जैसे कटु न हो तो मधुर क्या, जो मधुर न हो तो कटु क्या कहावे? क्योंकि एक स्वाद के एक रस के विरुद्ध होने से दोनों की परीक्षा होती है। जैसे कोई मनुष्य मीठा-मधुर ही खाता-पीता जाए, उस को वैसा सुख नहीं होता, जैसा सब प्रकार के रसों के भोगनेवाले को होता है।' आगे और भी सार्थक व सटीक बात कहते हुए वे लिखते हैं–'और जो ईश्वर अन्तवाले कर्मो का अनन्त फल देवे, तो उसका न्याय नष्ट हो जाए। जो जितना भार उठा सके, उतना उस पर धरना बुद्धिमानों का काम है। जैसे एक मन भर उठाने वाले के शिर पर दश मन धरने से भार धरने वाले की निन्दा होती है, वैसे अल्पज्ञ अल्पसामर्थ्य वाले जीव पर अनन्त सुख का भार धरना ईश्वर के लिए ठीक नहीं।

और जो परमेश्वर नए जीव उत्पन्न करता है, तो जिस कारण से उत्पन्न होते हैं, वह चुक जाएगा। क्योंकि चाहे कितना ही बड़ा धनकोष हो, परन्तु जिसमें व्यय है और आय नहीं, उसका कभी न कभी दीवाला निकल ही जाता है। इसलिए यही अवस्था ठीक है कि मुक्ति में जाना, वहाँ से पुनः आना ही अच्छा है।

आर्यसमाज के इतिहास पुरुषः श्री लाला गोविन्दराम जी–2

–प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'
वेद सदन, अबोहर-१५२११६

आर्यसामाजिक पत्रों में आर्यसमाज के लिये समर्पित तथा जीवन भर धर्म रक्षा व धर्म प्रचार के लिये संघर्ष करने वाले, दुःख कष्ट झेलने वाले छोटे-बड़े सेवकों पर प्रेरणाप्रद खोजपूर्ण पठनीय लेख तो अपवाद रूप में ही आते हैं

परन्तु, जिन का आर्यसमाज के संगठन व प्रचार से दूर-दूर का भी सम्बन्ध नहीं उन पर घिसे पिटे लेख देते रहना एक फ़ैशन बन गया है। लेख अच्छा भी हो सकता है परन्तु यह भी तो देखा जावे कि धर्म प्रचार में इसका क्या उपयोग है। अब वैद्य गिरी भी आर्यसमाजी पत्रों का एक मुख्य विषय बन चुका है।

तपस्वी निर्भीक साधु स्वामी बेधड़क जी, चौ० पृथ्वी सिंह जी बेधड़क, पं० अयोध्याप्रसाद जी, श्री पं० आर्यमुनि जी, स्वामी नित्यानन्द जी, कंवर सुखलाल जी, चौधरी जुगलाल जी, स्वामी पूर्णानन्द जी मेरठ, महाशय कृष्ण जी, पं० ठाकुरदत्त जी पर कोई ठोस लेख पढ़ने को आँखें तरसती तड़पती हैं।

श्री लाला गोविन्दराम जी हमारे एक ऐसे इतिहास पुरुष हुये हैं जिन्होंने आर्यसमाज के निर्माण, जाति रक्षा तथा देश के स्वाधीनता संग्राम में अविस्मरणीय योगदान दिया। हमने उनको मात्र एक व्यापारी और व्यवसायी मानकर आर्यसमाज तथा ला० गोविन्दराम जी का अवमूल्यन कर दिया। एक मिशनरी संस्था के लिये साहित्य प्रकाशक का भी उतना ही महत्त्व है जितना कि एक शास्त्रार्थ महारथी तथा श्री सन्तराम बी०ए०, पं० पद्मसिंह शर्मा तथा पं० नरेन्द्र जी सरीखे पत्रकार का है। पूज्य उपाध्याय जी इसके महत्त्व पर बल देते रहे।

हमारे अदूरदर्शी लेखकों ने कभी इस दृष्टि से अपने इतिहास लेखन पर विचार ही नहीं किया। श्री महाशय राजपाल जी ने लगभग सत्रह वर्ष तक साहित्य प्रकाशन की सेवा करते हुये धर्म की बलिवेदी पर प्राण चढ़ाये। उनके पश्चात् उनके परिवार ने भी सत्रह वर्ष तक आर्य साहित्य प्रकाशन की सेवा की फिर इसे छोड़ दिया।

आर्य पुरुषो! ला० गोविन्दराम जी की तपस्या व निष्ठा का मूल्यांकन कुछ तो कीजिये कि आज उनकी चौथी पीढ़ी दिन-रात ऋषि मिशन की निरन्तर सेवा कर रही है। श्री अजय तथा श्री अनिल दोनों भाइयों की अगली पीढ़ी भी दादा-परदादा के मिशन से वैसे ही जुड़ी हुई है जैसे विजय जी थे। इस बात का ध्यान करके मेरा ला० गोविन्दराम जी के अदृश्य चरणों में शीश झुक जाता है।

लाला गोविन्दराम और उनकी सन्तान ने ऋषि के मिशन के लिये जो कष्ट झेले उसका लेखा-जोखा आज तक किसने किया? मात्र एक मेरा ऐसा लेख कभी छपा था। पं० नरेन्द्र जी, पं० रामचन्द्र जी देहलवी, श्याम भाई, पं०

शान्ति प्रकाश जी, श्री पं० निरञ्जनदेव जी पर अभियोग चले। जेलों में भी जाना पड़ा। क्या किसी ने कभी गोविन्दराम हासानन्द पर कितने केस किये गये, इस पर कभी कुछ लिखा?

लालाजी पर वैदिक धर्म की रक्षा व सेवा के कारण अभियोग चलाये गये। क्या वह डोले? श्री विजय जी पर भी केस चलाये गये। हमारी आँखों के सामने अपनों ने भी उन पर एक केस चलाया। क्या इतने थोड़े समय में जागरूक समझी जाने वाली संस्था आर्यसमाज अपने तप: पूत विजय की अग्नि परीक्षा भूल गई? एक बार दिल्ली से अति दूर मध्य प्रदेश के एक न्यायालय में उन पर अभियोग चलाया गया। दूरदर्शी न्यायप्रिय न्यायाधीश ने उस केस को दिल्ली बदल दिया। केस करने वाला भी दिल्ली में जिस पर केस वह भी दिल्ली में। इतनी दूर केस करने का प्रयोजन उनके काम धंधे को ठप्प करने के अतिरिक्त और क्या था?

इस अभियोग पर भी एक बार मैंने ही लिखा। मैं तो उनकी पीड़ा को समझता हूँ। मेरा परिवार, मेरे माता-पिता, भाई-बहिन इस दु:ख व यातना के भुक्त भोगी हैं। जब-जब मेरे ज्येष्ठ भ्राता प्रिं० यशपाल जी पर लम्बे-लम्बे केस चले और मेरी अग्नि परीक्षा हुई तब परिवार पर क्या बीती इसको सहृदय गृहस्थी अनुभव कर सकते हैं।

तीन वर्ष के लम्बे समय तक बिना प्राथमिकी (F.I.R.) प्रिं० यशपाल जी पर जाति सेवा के कारण लम्बा अभियाग चला। आर्य जनता क्या भूल गई कि कुछ वर्ष पूर्व अनुभवहीन श्री अजय आर्य पर मुसलमान मतांध विरोधियों ने सत्यार्थप्रकाश के प्रचार-प्रसार के अपराध में केस चलाया था। ऐसा स्वर्णिम इतिहास है इस आर्यकुल का। अजय जी की अग्नि परीक्षा हो गई। वह अडिग और अडोल रहे। इस पर आर्य मात्र को इतराने का अधिकार है परन्तु, हम इसका सारा श्रेय इतिहास पुरुष लाला गोविन्दराम जी को देते हैं जिन्होंने समाज को ऐसा पौत्र रत्न दिया।

आज मैं इस इतिहास पर अधिक विस्तार से नहीं लिखूँगा। डॉ० धर्मवीर आर्य जी ने देश भर में आर्यो पर चलाये गये अभियोगों का विवरण परोपकारी में प्रकाशित करने के लिये आर्यों को प्रेरित किया। तब मैंने कुछ एक आर्यों पर चलाये गये अभियोगों पर कुछ लिखा था। और किसी ने एक पंक्ति भी न भेजी तो मैंने भी वह लेख माला बन्द कर दी। वैसे जो जीवनियाँ मैंने लिखी हैं उनमें ला० लाजपतराय जी, स्वामी श्रद्धानन्द जी, पं० मनसाराम जी, पं० शान्ति

प्रकाश जी आदि के अभियोगों पर बहुत कुछ लिखा है। श्री पं० लेखराम जी, श्याम भाई, पं० नरेन्द्र जी, पं० रामचन्द्र जी देहलवी के अभियोगों पर उनकी जीवनियों में प्रकाश डाला है।

स्वदेशी आन्दोलन की नींव में:—अभी इन्हीं दिनों सात खण्डों के आर्यसमाज के इतिहास के आधार पर किसी ने एक आर्य पत्र में एक अंग्रेजी दैनिक से एक समाचार उद्धृत करके आर्यसमाज की स्वदेशी आंदोलन को देन को बहुत उजागर करते हुये यह दिखाया है जैसे कि यह इतिहास की अनुपम खोज है।

इन सात खण्डों के इतिहास के लेखकों की रिसर्च ऐसी ही है। अंग्रेज़ी पत्रों की कतरण इनके लिये परम प्रमाण है। ला० गोविन्दराम जी ने कांग्रेस के स्वदेशी आन्दोलन तथा सत्यकेतु जी के ग्रन्थ की कतरण से बहुत पहले सन् 1903 में कोलकता में स्वदेशी वस्त्रों की दुकान खोलकर क्या बंगाल के देश भक्तों को स्वदेशी आंदोलन की घुट्टी नहीं पिलाई थी? लाला० जी ने जब अपनी स्वदेशी वस्त्रों की दुकान खोली तब बंगाल में अथवा कहीं अन्यत्र स्वदेशी आंदोलन अथवा विदेशी वस्त्रों के बहिष्कार के राजनीतिक आन्दोलन का नाम तक नहीं था।

महात्मा मुंशी राम स्वदेशी आन्दोलन के जनक थे:—सन् 1903 में ही जालंधर में महात्मा मुंशीराम की विशाल कोठी देश में स्वदेशी आन्दोलन का सबसे पहला केन्द्र या गढ़ था। उनके निवास पर वीर किशनसिंह, अजीतसिंह जैसे देश भक्त स्वदेशी वस्तुओं के प्रयोग के महत्त्व पर सभायें करते व भाषण देते। ऐसे समाचार मैंने तत्कालीन पत्रों में पढ़े हैं और कुछ पुस्तकों व लेखों में उद्धृत भी किये हैं। दूसरे संगठन अपने छोटे-छोटे कामों व समाचारों को बहुत उछालते हैं परन्तु आर्यसमाज में अब इतिहास बोध रहा ही नहीं। यह statesman के सन् 1913 के समाचार को ही चाटे जा रहे हैं। सन् 1903 के समाचारों की तुलना में सन् 1913 की कतरण का क्या महत्त्व?

जब लाहोर में नालियों में Hat (टोप) फेंके गये:—इस प्रसंग में यह बता दें कि लाला लाजपतराय जी के देश से निष्कासन से पहले सन् 1904 में लाहोर की अनारकली व बच्छोवाली समाज के उत्सव में भाग लेने टोहाना समाज के सज्जन गये। उनके साथ जाखल के महाशय मोहनलाल तथा नरवाना के आस पास के कई ग्रामीण आर्य तथा मुहम्मद असलम नाम का भी

एक आर्य युवक था। तब शोभा यात्रा में लोक कवि यशवन्त सिंह के एक जोशीले गीत:–

"उनकी इज़्ज़त भी क्या ख़ाक जिनको पगड़ी दें परदेशी" को सुनकर अंग्रेज़ी Hat (टोप) तथा विदेशी कपड़े की पगडियाँ उतार–उतार कर नालियों में फेंक–फेंक कर नया इतिहास रच दिया। उपरोक्त पूरा गीत मेरे पास है। टोहाना के लाला देवीदयाल की डायरी का वह पृष्ठ मेरे पास सुरक्षित है जिसमें इस घटना का वर्णन है। ला० मोहनलाल जी के श्रीमुख से भी मैंने इस घटना का आँखों देखा सब वृत्तान्त पुस्तकों व लेखों में दिया। आर्य समाजी बाबुओं ने अहंकार के कारण इतने Documents दस्तावेज़ों व साक्षियों की उपेक्षा करके सत्य को उभरने ही नहीं दिया।

स्वदेशी आन्दोलन का बिगुल अलीगढ़ में बजाया गया:–यह भी बताना आवश्यक है कि सन् 1873 में ऋषिवर ने अलीगढ़ में ठाकुर भोपालसिंह के पुत्र ऊधोसिंह को स्वदेशी वस्त्रों के प्रयोग का उपदेश देकर आधुनिक इतिहास में स्वदेशी वस्त्रों व वस्तुओं के प्रयोग के आंदोलन का बिगुल बजाकर स्वदेशी आन्दोलन को जन्म दिया।[1]

ला० गोविन्दराम का सत्साहस:–जातिवाद की बंधन कड़ियाँ तोड़ने में ला० गोविन्दराम जी महात्मा मुंशीराम के पीछे डटकर खड़े हो गए। उनका पूरा परिवार क्रांति का ध्वजवाहक रहा है। (क्रमश:)

पौराणिक हिन्दुओं की 8 शंकाओं का समाधान

–आर्य जिज्ञासु

1. **प्रश्न:** क्या रावण के दस सिर थे?
   उत्तर: नहीं रावण 4 वेदों और 6 शास्त्रों का विद्वान् था। तो जिसके कारण उसको दस दिमाग वाला दशानन कहा जाता था। तो इसी कारण 4+6=10, उसको दशानन कहा जाता है। जिसका अर्थ दस सिर कदापि नहीं है।
2. **प्रश्न:** क्या हनुमान जी बंदर थे? और उनकी पूँछ भी थी?
   उत्तर: नहीं वे मनुष्य थे। क्योंकि जिस जाति के वे थे वह वानर जाति कहलाती है। और जैसे भील नामक जाति थी वैसे ही वानर भी थी। वानर

1. द्रष्टव्य महर्षि दयानन्द सरस्वती सम्पूर्ण जीवन चरित्र पृष्ठ 357

का तात्पर्य बंदर कभी नहीं होता। और पूँछ वाली बात तुलसी कृत रामचरितमानस में आती है। वाल्मीकि रामायण में ऐसी गप्पें नहीं है। आजकल जो TV serial रामायण पर बनते हैं वे भी तुलसी की रामचरितमानस के आधार पर बनते हैं। जिसके कारण लोगों के मनों में यह पूँछ वाले हनुमान जी बैठ गये हैं। अपनी गदा लेकर!! और serial बनाने वालों से पूछना चाहिये कि जिन वानरों को आप TV में बंदर मुखी दिखाते हो, तो उनकी स्त्रियों को वैसा क्यों नहीं दिखाते? क्यों वे मानवी ही होती हैं? क्यों नहीं उनके भी पूँछ और बंदर का मुख होता?

3. **प्रश्नः** क्या महाभारत के कृष्ण की 16000 रानियाँ थीं?
   उत्तरः नहीं, उनकी एक ही रानी थी। जिसका नाम रुक्मिणी था। ये 16000 वाली बकवास भागवत पुराण जैसे मिथ्या ग्रन्थ में लिखी है। भला 16000 रानियों से संभोग करने वाला कृष्ण जीवित कैसे बचता? नपुंसकता जैसे रोगों से वह शीघ्र ही मर जाता। और मान लें एक रात एक रानी के पास रुकता तो अपनी 365वीं रानी तक पहुँचने में उसको एक वर्ष लग जाता। और एक वर्ष हर दिन संभोग करने वाले व्यक्ति का हाल क्या होगा? जरा सोचें। भागवत मिथ्याचारियों ने अपने पाप छुपाने के लिये कृष्ण पर मिथ्या दोष लगाये हैं।
4. **प्रश्नः** क्या कृष्ण गोपियों से क्रीड़ा करते थे? और जब वे तालाब में नहातीं तो वे उनके कपड़े ले भागते थे?
   उत्तरः नहीं, कृष्ण का जन्म होते ही वह कुछ वर्ष अपनी प्रथम आया के वहाँ रहे। करीब 6 वर्ष तक वह वृंदावन में खेलते-कूदते रहे और फिर अवनंतिकापुरी में सांदिपन के गुरुकुल में भेजा गया। तो वह 30 वर्ष आयु तक विद्या प्राप्त करके वापिस आये और आकर उनको मथुरा में जनसंघ की स्थापना करनी थी, कंस का चक्रव्यूह तोड़ कर। तो उसके पश्चात् वे कौरवों और पांडवों के झगड़े मिटाने को हस्तिनापुर और विदेह आदि राज्यों के चक्कर काटते रहे तो यह रास रचाने और कपड़े उठाने का समय उनको कब मिला? यह झूठी भागवत है।
5. **प्रश्नः** क्या ब्रह्मा के चार मुख थे?
   उत्तरः नहीं, ब्रह्मा का एक ही मुख था। उन्हें चारों वेदों के प्रकाण्ड विद्वान् कहा जाता था, यानी कि चारों ओर से ज्ञानी जिसको चतुर्मुखी कहा जाता था। तो ब्रह्मा एक उपाधि थी। कई ब्रह्मा सृष्टि की आदि से लेकर

अब तक हो गये हैं। और उनके एक ही मुँह था।

6. **प्रश्नः** क्या विष्णु के चार भुजायें थीं?
   उत्तरः नहीं! विष्णु नामक कोई काल्पनिक ईश्वर नहीं है, जिसको आप चित्रों में देखते हो। विष्णु निराकार ईश्वर का ही एक नाम है।
7. **प्रश्नः** क्या गणेश का मुँह हाथी का था?
   उत्तरः हाथी के बच्चे का मुँह इतना चौड़ा होता है कि उसका भार एक छोटे बच्चे का शरीर कैसे सम्भालेगा? और उस हाथी के सिर और मनुष्य के बच्चे का तो व्यास (Diameter) ही आपस में मेल नहीं खायेगा? और जैसा कि शिवपुराण की कथा में आता है कि शिवजी ने क्रोध में गणेश का सिर काट दिया, तो फिर वो हाथी के बच्चे का ही शरीर क्यों ढूंढने दौड़े? उन्होंने वही अपने पुत्र का मनुष्य का कटा हुआ सिर क्यों नहीं लगाया? ये सब मिथ्या और अप्रामाणिक बातें हैं।

आर्यसमाज की महान विभूति : डॉ. भवानी लाल भारतीय

–डॉ० विवेक आर्य

भवानी लाल भारतीय जी का आज रात को देहावसान हो गया। उनका जाना बहुत ही दुखद समाचार है। वैदिक साहित्य तथा आर्यसमाज के लिए यह अपूरणीय क्षति है, ऋषि दयानंद के जीवन पर जितना साहित्य उन्होंने दिया वह उनकी अद्वितीय देन है, उनकी स्मृति को शत-शत नमन।

स्वामी दयानन्द की वैदिक विचारधारा को जन-जन तक पहुँचाने में हज़ारों आर्यों ने अपने-अपने सामर्थ्य के अनुसार योगदान दिया। साहित्य सेवा द्वारा श्रम करने वालों ने पंडित लेखराम की अंतिम इच्छा को पूरा करने का भरपूर प्रयास किया। डॉ. भवानीलाल भारतीय आर्य जगत कि महान् विभूति हैं जिनका सम्पूर्ण जीवन साहित्य सेवा द्वारा ऋषि के ऋण से उऋण होने के लिए प्रयासरत रहा। राजस्थान के नागौर जिले के परबतसर ग्राम में मई 1928 को भारतीय जी का जन्म हुआ। प्रारंभिक शिक्षा के पश्चात् आपने अध्यापन करते हुए हिंदी एवं संस्कृत दो भाषाओं में एम. ए. किया। कालांतर में आपने आर्यसमाज की संस्कृत भाषा को देन विषय पर शोध प्रबंध लिखा जिसे पंडित भगवत दत्त

सरीखे मनीषी द्वारा सराहा गया। आप आर्यसमाज पाली, अजमेर के प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान, परोपकारिणी सभा, सार्वदेशिक सभा के अधिकारी भी रहे। आप स्वामी दयानंद चेयर, पंजाब यूनिवर्सिटी, चंडीगढ़ के अध्यक्ष पद से सेवा निवृत हुए।

डॉ. भारतीय जी का लेखन–

1. तुलनात्मक अध्ययन विषयक ग्रन्थ

ऋषि दयानन्द और अन्य भारतीय धर्माचार्य, महर्षि दयानन्द और राजा राममोहन राय, आधुनिक धर्म सुधारक और मूर्तिपूजा, महर्षि दयानंद और स्वामी विवेकानंद, स्वामी दयानंद और ईसाई मत।

2. वेद विषयक ग्रन्थ

वेदों में क्या है? वेदाध्ययन के सोपान, उपनिषदों की कथाएँ भाग 1, ऋग्वेद–यजुर्वेद–सामवेद एवं अथर्ववेद परिचय, वेदों की अध्यात्मधारा, वैदिक कथाओं का सच, उपनिषदों की अध्यात्म धारा, ऋग्वेद–यजुर्वेद–सामवेद एवं अथर्ववेद अध्यात्म शतक,

3. ऋषि दयानंद विषयक ग्रन्थ

महर्षि दयानंद का राष्ट्रवाद, ऋषि दयानंद और आर्यसमाज की संस्कृत भाषा और साहित्य को देन, महर्षि दयानंद श्रद्धांजलि, महर्षि दयानंद प्रशस्ति, ऋषि दयानंद के ऐतिहासिक संस्मरण, स्वामी दयानंद के दार्शनिक सिद्धांत, दयानंद साहित्य सर्वस्व, महर्षि दयानंद प्रशस्ति काव्य, मैंने ऋषि दयानंद को देखा, ऋषि दयानंद की खरी–खरी बातें, ऋषि दयानंद के चार लघु चरित, दयानंद चित्रावली (अंग्रेजी), swami dayanand saraswati his life and ideas-shiv nandan kulyar,

4. महापुरुषों के जीवनचरित

श्रीकृष्ण चरित, पंडित गणपति शर्मा, स्वामी दर्शनानन्द, महात्मा कालूराम जी, कुंवर चाँद करण शारदा, नवजागरण के पुरोधा–स्वामी दयानंद, पंडित श्याम जी कृष्ण वर्मा, ऋषि दयानंद के भक्त, प्रशंसक और सत्संगी, श्रद्धानन्द जीवनकथा, राजस्थान के आर्य महापुरुष।

5. आर्यसमाज विषयक ग्रन्थ

आर्यसमाज के शास्त्रार्थ महारथी, आर्यसमाज के वेद सेवक विद्वान, परोकारिणी सभा का इतिहास, आर्यसमाज का अतीत और वर्तमान, आर्यसमाज

के पत्र और पत्रकार, आर्यसमाज विषयक साहित्य परिचय, आर्यसमाज का इतिहास-पांच खंड का विवेचन, आर्यसमाज के बीस बलिदानी।

6. स्वामी दयानंद के ग्रंथों का संपादन

चतुर्वेद विषय सूची, ऋग्वेद के प्रारंभिक 22 मन्त्रों का भाष्य, दयानंद शास्त्रार्थ संग्रह, दयानंद उवाच, महर्षि दयानंद की आत्मकथा, उपदेश मंजरी, पंडित लेखराम रचित स्वामी दयानंद का जीवनचरित।

7. अन्य ग्रन्थ

बालकों की धर्म शिक्षा, पंडित रुद्र दत शर्मा ग्रंथावली भाग 1, शुद्ध गीता, दयानंद दिग्विजयार्क, कविरत्न प्रकाशचंद्र अभिनन्दन ग्रन्थ, पंडित महेंद्र प्रताप शास्त्री अभिनन्दन ग्रन्थ, स्वामी भीष्म अभिनन्दन ग्रन्थ, श्रद्धानन्द ग्रंथावली 9 भाग, ऋषि दयानंद प्रशस्ति, श्री दयानंद चरित।

8. विभिन्न ग्रन्थ

विद्यार्थी जीवन का रहस्य, ब्रह्मवैवर्त पुराण की आलोचना, महर्षि दयानंद निर्वाण शताब्दी व्याख्यान माला, आर्य लेखक कोष-1200 आर्यविद्वानों का लेखन परिचय।

9. सत्यार्थ प्रकाश विषयक ग्रन्थ

ज्ञानदर्शन-एकादश समुल्लास की व्याख्या, विश्व धर्म कोष-सत्यार्थ प्रकाश, हिन्दू धर्म की निर्बलता।

10. अनूदित ग्रन्थ

श्रीमद्भागवत (गुजराती), मीमांसा दर्शन (गुजराती), आर्यसमाज-लाला लाजपत राय (अंग्रेजी), श्रद्धानन्द ग्रंथावली-कांग्रेस एण्ड आर्यसमाज एण्ड इट्स डेट्रेक्टर्स, पंडित गुरुदत्त विद्यार्थी-लाला लाजपत राय कृत का हिंदी अनुवाद, सूरज बुझाने का पाप (गुजराती)।

इसके अतिरिक्त आर्यसमाज की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में 1000 के करीब शोधपूर्ण लेख भी शामिल हैं।

डॉ. भारतीय जी की साहित्य साधना करीब एक लाख पृष्ठों से अधिक है और 50 से अधिक वर्षों की साधना और तप का परिणाम है। इस अवसर पर मैं केंद्रीय मंत्री डॉ. सत्यपाल सिंह जी से डॉ. भारतीय जी की स्मृति में देश के शीर्ष विश्वविद्यालय में उनकी स्मृति में चेयर स्थापित करने की विनती करता हूँ। इस चेयर से उनके द्वारा लिखित सकल साहित्य को न केवल सुरक्षित किया जाये अपितु उस पर शोधार्थी शोध भी करें।

अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलन के उपलक्ष्य में विशेष प्रकाशित साहित्य

पूज्य पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय जी के साहित्य, लेखों तथा व्याख्यानों को संग्रहित करके 'गंगा ज्ञान सागर' के नाम से धर्म प्रेमी जनता को भेंट किया जा रहा है। लगभग 2100 पृष्ठों में, बड़ा आकार।

गंगा ज्ञान सागर-1	सम्पा. प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	500.00
गंगा ज्ञान सागर-2	सम्पा. प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	500.00
गंगा ज्ञान सागर-3	सम्पा. प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	500.00
गंगा ज्ञान सागर-4	सम्पा. प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	500.00

2018 के नए प्रकाशन

सृष्टि विज्ञान	पं. आत्माराम अमृतसरी	150.00
पुत्रेष्टि यज्ञ	पं. सुरेन्द्र शर्मा गौड़	100.00
युवाओं को माँ का उपहार	कु. कंचन आर्या	99.00
वैदिक धर्म गाईड	श्री मदन रहेजा	20.00
वैदिक बाल शिक्षाएँ	स्वामी विद्यानन्द विदेह	18.00
वेदों में ईश्वर का स्वरूप	श्री वेद प्रकाश	250.00
अथातो धर्म जिज्ञासा	श्री वेद प्रकाश	225.00
मैं दयानन्द बोल रहा हूँ	डॉ. चन्द्रशेखर लोखण्डे	95.00
वैदिक धर्म जोड़ता है-तोड़ता नहीं	ब्र. नन्दकिशोर	20.00
वैदिक मान्यताओं का वैज्ञानिक और व्यावहारिक विवेचन	डॉ. राजपाल सिंह	75.00
Mother's Gift to the Young	Ku. Kanchan Arya	120.00
Vaidik Ethics	Ach. Darshananand	100.00
The origional Philosophy of Yoga (Yog Darshan of Patanjali)	Dr. Tulsiram	200.00

आगामी प्रकाशन

भारतीय संस्कृति का प्रवाह	पं. इन्द्र विद्यावाचस्पति
मैक्समूलर का एक्सरे (X- Ray of Maxmuller)	स्वामी श्रद्धानन्द जी
अमृत मंथन	पं. आत्माराम अमृतसरी के लेखों का संग्रह

नवम्बर 2018 Registered with Regn. of News Paper for India
वेदप्रकाश R.No. 627/57 Regd. No. DL(DG-11)/8030/2018-20, U(DGPO) 01/2018-20
Posted at Delhi RMS, Delhi-110006

2018 में पुनः प्रकाशित साहित्य

अथर्ववेदभाष्य (दो भागों में)	पं. खेमकरण दास त्रिवेदी	1500.00
मौलिक भेद	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	50.00
आध्यात्म रोगों की चिकित्सा	पं. इन्द्र विद्यावाचस्पति	80.00
ओंकार निर्णय	पण्डित शिवशंकर शर्मा	65.00
उपनिषद प्रकाश	स्वामी दर्शनानन्द सरस्वती	300.00
वेदान्तदर्शन	स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक	200.00
सांख्यदर्शन	स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक	150.00
आर्ष योगप्रदीपिका	स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक	125.00
कर्मरहस्य	महात्मा नारायण स्वामी	185.00
वेदरहस्य	महात्मा नारायण स्वामी	95.00
आत्मदर्शन	महात्मा नारायण स्वामी	170.00
यज्ञपद्धति मीमांसा	आचार्य विश्वश्रवा	80.00
श्रीमद्दयानन्द प्रकाश (सचित्र)	स्वामी सत्यानन्द (बड़ा साईज)	400.00
ईश्वर का वैदिक स्वरूप	पं. सुरेशचन्द्र वेदालंकार	45.00
सुधा सागर प्रवाह	श्रीमती सुधा वर्मा	1[illegible]0.00
संस्कार समुच्चय	पं. मदनमोहन विद्यासागर	350.00
महर्षि दयानन्द चरित्र (सचित्र)	पं. देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय	550.00
स्वाध्याय सन्दोह	स्वामी वेदानन्द तीर्थ	400.00
स्वाध्याय संदीप	स्वामी वेदानन्द तीर्थ	400.00
पं. रामचन्द्र देहलवी व उनका वैदिक दर्शन	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	200.00
सत्यार्थ प्रकाश (स्थूलाक्षरी)	स्वामी दयानन्द	550.00
पौराणिक पोल प्रकाश	पं. मनसाराम जी	450.00
पौराणिक पोप पर वैदिक तोप	पं. मनसाराम जी	400.00
विशुद्ध मनुस्मृति	पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय	350.00
Light of Truth	Dr. Chiranjiv Bharadwaj (Soft cover)	300.00
Light of Truth	Dr. Chiranjiv Bharadwaj (H. Bound)	450.00

प्राप्ति स्थानः विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द

4408, नई सड़क, दिल्ली-6, दूरभाष 23977216

Email: ajayarya16@gmail.com Web: www.vedicbooks.com